रैदासजी की बानी

[जीवन-चरित्र सहित]

(12)



मुद्रक व प्रकाशक

बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स,

इलाहाबाद

सन् १९८० ई०

[मूल्य ३)

Printed at The Belvedere Printing Works, Allahabad, By Sheel Mohan.

महात्मा

रैदास जी की बानी

[जीवन-चरित्र सहित]

——: ० :——

गूढ़ कड़ियों और कड़े शब्दों के अर्थ व संकेत नोट में लिख दिये गये हैं।

——: * :——

मुद्रक व प्रकाशक
बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स,
इलाहाबाद

नौवीं बार] सन् १९८० ई० [मूल्य ३)

Printed at The Belvedere Printing Works, Allahabad, By Sheel Mohan.

रैदास जी का जीवन-चरित्र

रैदासजी जाति के चमार एक भारी भक्त हो गये हैं जिनका नाम हिन्दुस्तान वरन् और देशों में भी प्रसिद्ध है। यह कबीर, साहिब के समय में वर्तमान थे और इस हिसाब से इनका जमाना ईसवी सन् की चौदहवीं सदी (शतक) ठहरता है।

यह महात्मा भी कबीर साहिब की तरह काशी में पैदा हुए। कहते हैं कि कबीर साहिब के साथ इनका परमार्थी संबाद कई बार हुआ जिसमें इन्होंने वेद शास्त्र आदि का मंडन और कबीर साहिब ने खंडन किया है। जो हो, पर इस ग्रन्थ के देखने से तो यही मालूम होता है कि रैदास जी को वेद शास्त्रों में कुछ भी श्रद्धा न थी।

कथा है कि पहले जनम में रैदास जी बाम्हन थे। स्वामी रामानन्द जी से उपदेश लिया था और उनकी सेवा में लगे रहते थे। एक दिन अपने गुरू के भोजन के लिए एक बनिया से सामग्री ले आये जिसका ब्यौहार चमारों के साथ भी था। इस हाल के जानने पर रामानन्द जी ने क्रोध से सराप दिया कि तुम चमार का जनम पावोगे। इस पर रैदास जी चोला छोड़ कर एक रग्घू नाम चमार के घर घुरबिनिया चमाइन से पैदा हुए परन्तु पूरबले जोग के बल से उनको पिछले जनम की सुध न बिसरी और अपनी माँ की छाती में मुँह न लगाया जब तक कि भगवन्त की आज्ञा से रामानन्द जी ने चमार के घर आप जाकर रैदास जी को माँ का दूध पीने की समझौती नहीं दी। स्वामी रामानन्द जी ने लड़के का नाम रविदास रक्खा, पीछे से लोग उन्हें रैदास रैदास कहने लगे।

जब रैदास जी सयाने हुए तो भक्तों और साधुवों की सेवा में सदा रहने लगे। साधु सेवा में ऐसा मन लग गया कि जो कुछ हाथ आता उनके खिलाने पिलाने और सत्कार में खर्च कर डालते। यह चाल उनके बाप रग्घू को, जो चमड़े के रोजगार से बड़ा धनी हो गया था, नहीं सुहाई और रैदास जी को अपने घर से निकाल कर पिछवाड़े की जमीन रहने को दे दी जहाँ छप्पर तक नहीं था। एक कौड़ी खर्च को नहीं देता था। रैदास जी वहाँ अकेले अपनी स्त्री के साथ बड़े आनन्द से रहने लगे, जूता बनाकर अपना गुजर करते और जो समय उस काम से बचता भगवत-भजन में लगाते।

इनका बैराग अनूठा था। भक्तमाल में लिखा है कि इनकी तंगी की दशा देख कर मालिक को दया आई और और साधु के रूप में रैदास जी के पास आकर उनको पारस पत्थर दिया और उससे जूता सीने के एक लोहे के औजार को सोना बनाकर दिखा भी दिया। रैदास जी ने उस पत्थर को लेने से इनकार किया, आखिर को साधु की हट से लाचार होकर कहा कि छप्पर में खोंस दो (यह छप्पर रैदास जी ने अपनी कमाई के पैसे से धीरे-धीरे बनवा लिया था) जब तेरह महीने पीछे वही साधु जी फिर आये और पत्थर का हाल पूछा तो रैदास जी ने जवाब दिया कि जहाँ खोंस गये थे वहीं देख लो मैंने नहीं छुआ है।

इसी तरह एक दिन पूजा की पिटारी में पाँच मोहर निकली, रैदास जी उसको देखकर ऐसा डरे मानो साँप हो, यहाँ तक कि पूजा से भी डरने लगे। तब भगवन्त ने आज्ञा की कि जो हमारा प्रसाद है उसका तिरस्कार मत करो। जिस पर रैदास जी को मानना पड़ा और फिर जो कुछ इस रीति से मिलता था उसको ले लिया करते थे और

उससे एक धर्मशाला और शंदिर भी बनवाया जिसमें .पूजा करने को बाम्हन रक्खे। यह हालत देख कर पंडितों को जलन पैदा हुई और राजा के यहाँ शिकायत की कि यह चमार होकर बाम्हनों को ढचर बनाये हुए है जिसका उसे अधिकार नहीं है इसलिये दंड का भागी है। राजा ने रैदास जी को बुलाकर हाल पूछा और उनके बचन से ऐसा प्रसन्न हुआ कि दंड देने के बदले बड़ा आदर किया।

भक्तमाल में लिखा है कि चित्तौड़ की रानी ने जो काशी में जात्रा के लिये आई थी रैदास जी की महिमा सुनकर उनको अपना गुरू बनाया। यह गति देखकर पंडितों की आग दूनी भड़की और बड़ी धूम मचाई और रानी को पागल ठहराया। रानी ने एक सभा करके सब पंडितों को और साथ ही रैदासजी को बुलाया जहाँ बहुत बाद-बिबाद हुआ—पंडित लोग जाति को बड़ा ठहराते थे और रैदास जी बर्णाश्रम की तुच्छता दिखला कर भगवतभक्ति को प्रधान करते थे; अन्त को यह बात तै पाई कि भगवान की मूर्ति जो सिंहासन पर विराजमान थी उसको आवाहन करके बुलाया जाय। जिसके पास वह आ जाय वही बड़ा। बेचारे पंडितों ने तीन पहर तक वेदध्वनि की और मन्त्र पढ़े पर मूरत अपनी जगह से न हिली। जब रैदास जी की पारी आई और उन्होंने प्रेम और दीनभाव से प्रार्थना की तो मूरत तुरत ही सिंहासन छोड़ कर रैदासजी की गोद में आ बैठी—सब देख कर चकित हो गये।

भक्तमाल में रैदास जी की महिमा के दृष्टांत में यह भी बरनन है कि जब चित्तौड़ की रानी जिसका नाम झाली लिखा है अपनी राजधानी को लौटी तो बड़े आदर भाव से रैदास जी को बुलाया और उनके सुशोभित होने के उत्सव में नगर के बाम्हनों को बहुत कुछ दान दिया और अपने यहाँ भोजन कराने के लिये उनको नेवता दिया। बाम्हनों ने लालचबस नेवता तो मान लिया परन्तु चमार की चेली के घर का बना हुआ भोजन करना धर्म के विरुद्ध समझ कर कोरा सीधा लेकर अपने हाथ से भोजन बनाया। जब खाने पर बैठे तो देखते क्या हैं कि हर पंगत में दो दो बाम्हनों के बीच में रैदास जी बैठे हैं—इस अचरजी कौतुक पर सब हक्के-बक्के हो गये, और कितनों ने चरनों पर गिर कर रैदास जी से दीक्षा ली। रैदास जी ने अपने कंधे की खलड़ी को उधेड़ कर जनेऊ दिखलाया कि सच्चा भीतर का जनेऊ यह है।

यह कथा सर्ब साधारन में मीराबाई के भोज के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है और बहुतों का विश्वास है कि वह चित्तौड़ की रानी जिसने रैदास जी से उपदेश लिया और उनका नेवता किया मीरा बाई थी पर इसके निर्णय की यहाँ आवश्यकता नहीं है।

यह कथा भी प्रसिद्ध है कि एक बड़े रईस रैदास जी की महिमा सुनकर उनके दर्शन और सतसंग को गये। उनके आश्रम पर पहुँच कर देखा कि एक बूढ़ा चमार और उसके साथ बहुत से और चमार बैठे जूते बना रहे हैं। थोड़ी देर पीछे सतसंग हुआ और उसके उपरांत एक चमार एक बड़े जूते में भर कर रैदास जी का चरनामृत लाया और सब को बाँटा, जब रईस साहिब की पारी आई तो उन्होंने उसे ले तो लिया पर घिन मान कर अपने सिर से उछाल कर पीछे गिरा दिया जो उनके अँगरखे में सूख गया। जब घर लौटे तो शुद्ध होने के लिये कपड़े उतार कर भंगी को दे दिये और आप

पंचगव्य से स्नान किया। उसी दिन से उनको गलित कोढ़ होने लगा और भङ्गी को जिस ने चरनामृत पड़ा हुआ कपड़ा पहिना सोने समान देह निकल आई और चेहरे पर बड़ा तेज आ गया। रईस साहब ने बहुत कुछ दवा की पर जब अच्छे न हुए तो अपने मुसाहिबों की सलाह से फिर रैदास जी के आश्रम पर चरनामृत मिलने की आसा में गये; उस दिन चरनामृत नहीं बँटा। तब रईस ने रैदास जी से प्रार्थना की कि चरनामृत मिले। जवाब पाया कि अब जो चरनामृत आवेगा वह केवल पानी होगा उसमें दया की मौज शामिल न होगी और मौज पर हमारा बस नहीं है। फिर कुछ दिन पीछे बहुत झुरने पछताने पर रैदास जी की दया दृष्टि से रईस अच्छा हो गया।

काशी गवर्मेन्ट संस्कृत पाठशाला के सन् १६०७ के एक परोक्षापत्र में नीचे लिखी हुई कथा संस्कृत में अनुवाद करने को छपी थी जिसे हम यहाँ लिखते हैं—

"इस संसार में वही आदमी ऊँचा कहा जाता है जो कि ऊँचा काम करे, ऊँचे घर में पैदा होने से ऊँचा नहीं कहलाता। देखो आग से धुआँ पैदा होता है, वह हवा के संग से आसमान में भी बहुत दूर तक चढ़ जाता है पर लोगों की आँख में पड़ कर तकलीफ ही देता है, इसीलिये लोग धुएँ को बुरा कहते हैं। आग से कभी कभी बहुत लोग जल कर मर जाते हैं। गाँव के गाँव राख हो जाते हैं तो भी उससे बहुत फायदा होता है, इसलिये सब लोग उसे पसन्द करते हैं। ऊँची जाति में पैदा होने का जो लोग घमंड करते हैं उन्हें अच्छे लोग नादान समझते हैं। बनारस में एक बाम्हन किसी रघुबंसी छत्री की ओर से रोज गंगा जी को फूल पान और सोपारी चढ़ाने जाता था। एक दिन वह बाम्हन जूता खरीदने के लिये रैदास चमार की दूकान पर गया। बात बात में वहाँ पर गंगा पूजा की चर्चा चल पड़ी। रैदास ने कहा कि मैं आप को यों ही जूता देता हूँ, कृपा कर आज मेरी इस सोपारी को भी गंगा जी को चढ़ा देना। बाम्हन ने उस सोपारी को जेब में रख लिया। दूसरे दिन गंगा में नहा धो कर जजमान की सोपारी इत्यादि को चढ़ा कर पीछे से चलती बेरा जेब में से रैदास की सोपारी को निकाल कर दूर से गंगा जी में फेंका। गंगा जी ने पानी में से हाथ ऊँचा कर उस सोपारी को ले लिया। यह तमाशा देख कर वह बाम्हन कहने लगा कि सच है—

"जाति पाँति पूछै नहिं कोई। हरि को भजै सो हरि को होई॥"

रैदास जी पूरी अवस्था को पहुँच कर अर्थात् १२० बरस के होकर ब्रह्म पद को सिधारे और उनके पंथ के अनुयाइयों का विश्वास है कि यह कबीर साहिब की भाँति सदेह गुप्त हो गये बरन अपनी बानी को भी साथ ले गये !!!

गुजरात प्रान्त में इस मत के लाखों आदमी हैं जो अपने को रविदासी कहते हैं।

———

सूचीपत्र

रैदासजी की बानी

॥ साखी ॥

हरि सा हीरा छाड़ि कै, करै आन की आस।
ते नर जमपुर जाहिंगे, सत भाषै रैदास ॥ १ ॥
अंतरगति राचैं नहीं, बाहर कथैं उदास ।
ते नर जमपुर जाहिंगे, सत भाषै रैदास ॥ २ ॥
रैदास कहै जाके हृदै, रहै रैन दिन राम।
सो भगता भगवन्त सम, क्रोध न व्यापै काम ॥ ३ ॥
जा देखे घिन ऊपजै, नरक कुंड में बास।
प्रेम भगति सों ऊधरे, प्रगटत जन रैदास ॥ ४ ॥
रैदास तूँ काँवच[1] फली, तुझे न छीपै[2] कोइ।
तैं निज नावँ न जानिया, भला कहाँ ते होइ ॥ ५ ॥
रैदास राति न सोइये, दिवस न करिये स्वाद।
अह-निसि[3] हरिजी सुमिरिये, छाड़ि सकल प्रतिबाद ॥ ६ ॥

॥ पद ॥

राग रामकली

॥ १ ॥

परचै राम रमै जो कोई। या रस परसे दुबिध न होई ॥टेक॥
जे दीसे ते सकल बिनास। अनदीठे नाहीं बिसवास ॥ १ ॥
बरन कहंत कहैं जे राम। सो भगता केवल निःकाम ॥ २ ॥
फलकारन फूलै बनराई। उपजै फल तब पुहुप बिलाई ॥ ३ ॥
ज्ञानहि कारन करम कराई। उपजै ज्ञान त करम नसाई ॥ ४ ॥
बट क बीज जैसा आकार। पसर्‌यो तीन लोक पासार ॥ ५ ॥

---

(१) किवाँच जिसके बदन में छू जाने से खाज पैदा हो कर ददोरे पड़ जाते हैं। (२) छुए। (३) दिन रात।

जहँ का उपजा तहाँ बिलाइ । सहज सुन्नि में रह्यो लुकाइ ॥६॥
जे मन बिंदै सोई बिंद । अमा[1] समय ज्यों दीसै चंद ॥७॥
जल में जैसे तूँबा तिरै । परिचै[2] पिंड जीव नहिं मरै ॥८॥
सो मन कौन जो मन को खाइ । बिन द्वारे तिरलोक समाइ ॥९॥
मन की महिमा सब कोइ कहै । पंडित सो जो अनतै रहै ॥१०॥
कह रैदास यह परम बैराग । राम नाम किन[3] जपहु सभाग ॥११॥
घृत कारन दधि मथै सयान । जीवनमुक्ति सदा निरबान ॥१२॥

॥ २ ॥

अब मैं हार्यों रे भाई ।
थकित भयों सब हाल चाल ते, लोक न बेद बड़ाई ॥टेक॥
थकित भयो गायन अरु नाचन, थाकी सेवा पूजा ।
काम क्रोध ते देह थकित भइ, कहौं कहाँ लौं दूजा ॥१॥
राम जनहुँ ना भगत कहाऊँ, चरन पखारुँ न देवा ।
जोइ जोइ करौं उलटि मोहिं बाँधैं, ता तें निकट न भेवा ॥२॥
पहिले ज्ञान क किया चाँदना, पाछे दिया बुझाई ।
सुन्न सहज में दोऊ त्यागे, राम न कहुँ दुखदाई ॥३॥
दूर बसे षट कर्म सकल अरु, दूरउ कीन्हे सेऊ ।
ज्ञान ध्यान दूर दोउ कीन्हे, दूरिउ छाड़े तेऊ ॥४॥
पाँचो थकित भये हैं जहँ तहँ, जहाँ तहाँ थिति[4] पाई ।
जा कारन में दौरो फिरतो, सो अब घट में आई ॥५॥
पाँचो मेरी सखी सहेली, तिन निधि दई दिखाई ।
अब मन फूलि भयो जग महियाँ, आप में उलटि समाई ॥६॥
चलत चलत मेरो निज मन थाक्यो, अब मोसे चलो न जाई ।
साईं सहज मिलो सोइ सनमुख, कह रैदास बड़ाई ॥७॥

(१) अमावस । (२) परिचय हो जाने से पिंड का भेद जान ले तो जीवनमुक्त हो जाय । (३) क्यों न । (४) स्थिति = ठहराव ।

॥ ३ ॥

गाइ गाइ अब का कहि गाऊँ।
गावनहार को निकट बताऊँ ॥टेक॥
जब लग है या तन की आसा, तब लग करै पुकारा।
जब मन मिल्यो आस नहिं तन की, तब को गावनहारा ॥१॥
जब लग नदी न समुद समावै, तब लग बढ़ै हँकारा।
जब मन मिल्यो राम सागर सों, तब यह मिटी पुकारा ॥२॥
जब लग भगति मुकति की आसा, परम तत्त्व सुनि गावै।
जहँ जहँ आस धरत है यह मन, तहँ तहँ कछू न पावै ॥३॥
छाड़ै आस निरास परम पद, तब सुख सति कर होई।
कह रैदास जासों और करत है, परम तत्त्व अब सोई ॥४॥

॥ ४ ॥

राम भगत को जन न कहाऊँ, सेवा करूँ न दासा।
जोग जग्य गुन कछू न जानूँ, ताते रहूँ उदासा ॥टेक॥
भगत हुआ तो चढ़ै बड़ाई, जोग करूँ जग मानै।
गुन हूआ तो गुनी जन कहै, गुनी आप को आनै ॥१॥
ना मैं ममता मोह न महिया[1], ये सब जाहिं बिलाई।
दोजख भिस्त दोउ सम कर जानौं, दुहुँ ते तरक है भाई ॥२॥
मैं अरु ममता देखि सकल जग, मैं से मूल गँवाई।
जब मन ममता एक एक मन, तबहि एक है भाई ॥३॥
कृस्न करीम राम हरि राघव, जब लग एक न पेखा।
बेद कतेब कुरान पुरानन, सहज एक नहिं देखा ॥४॥
जोइ जोइ पूजिय सोइ सोइ काँची, सहज भाव सत होई।
कह रैदास मैं ताहि को पूजूँ, जाके ठावँ नावँ नहि होई ॥५॥

(१) मथा।

॥ ५ ॥

अब मेरी बूड़ी रे भाई, ताते चढ़ी लोक बड़ाई ॥टेक॥
अति अहंकार उर माँ सत रज तम, ता में रह्यो उरझाई ।
कर्मन बझि पर्‌यो कछू नहिं सूझै, स्वामी नावँ भुलाई ॥१॥
हम मानो गुनी जोग सुनि जुगता, महा मुरुख रे भाई ।
हम मानो सूर सकल बिधि त्यागी, ममता नहीं मिटाई ॥२॥
हम मानो अखिल[1] सुन्न मन सोध्यो, सब चेतन सुधि पाई ।
ज्ञान ध्यान सबही हम जान्यो, बूझौं कौन सों जाई ॥३॥
हम जानो प्रेम प्रेम रस जाने, नौबिधि भगति कराई ।
स्वाँग देखि सब ही जन लटक्यो, फिरि यों आन बँधाई ॥४॥
यह तो स्वाँग साच ना जानो, लोगन यह भरमाई ।
स्वच्छ रूप सेली जब पहरी, बोली तब सुधि आई ॥५॥
ऐसी भगति हमारी संतो, प्रभुता इहइ बड़ाई ।
आपन अनत और नहिं मानत, ताते मूल गँवाई ॥६॥
भन रैदास उदास ताहि ते, अब कछु मो पै कर्‌यो न जाई ।
आपा खोए भगति होत है, तब रहै अंतर उरझाई ॥७॥

॥ ६ ॥

भाई रे भरम भगति सुजान ।
जौ लों साँच सों नहि पहिचान ॥टेक॥
भरम नाचन भरम गायन, भरम जप तप दान ।
भरम सेवा भरम पूजा, भरम सो पहिचान ॥१॥
भरम षट क्रम सकल सहता, भरम गृह बन जानि ।
भरम करि करि करम कीये, भरम की यह बानि ॥२॥
भरम इंद्री निग्रह कीया, भरम गुफा में बास ।
भरम तो लों जानिये, सुन्न की करै आस ॥३॥

---

(१) संपूर्ण ।

भरम सुद्ध सरीर तौ लौं, भरम नावँ बिनावँ।
भरम भनि रैदास तौ लौं, जौ लौं चाहै ठावँ ॥४॥

॥ ७ ॥

ज्यों तुम कारन केसवे, अंतर लव लागी।
एक अनूपम अनुभवी, किमि होइ बिभागी ॥टेक॥
इक अभिमानी चातृगा[1], बिचरत जग माहीं।
यद्यपि जल पूरन मही, कहूँ वा रुचि नाहीं ॥१॥
जैसे कामी देखि कामिनी, हृदय सूल उपजाई।
कोटि बैद बिधि ऊचरैं, वा की बिथा न जाई ॥२॥
जो तेहि चाहै सो मिलै, आरत गति होई।
कह रैदास यह गोप नहिं, जानै सब कोई ॥३॥

॥ ८ ॥

आयौं हो आयौं देव तुम सरना।
जानि कृपा कीजे अपनौ जना ॥टेक॥
त्रिबिध जोनि बास जम को अगम त्रास,
तुम्हरे भजन बिन भ्रमत फिरौं।
ममता अहं बिषै मद मातौ,
यह सुख कबहुँ न दुतर[2] तिरौं ॥१॥
तुम्हरे नावँ बिसास छाड़ी है आन की आस,
संसार धरम मेरो मन न धीजै[3]।
रैदास दास की सेवा मानि हो देव बिधि देव,
पतित पावन नाम प्रगट कीजै ॥२॥

॥ ९ ॥

भाई रे राम कहाँ मोहिं बताओ।
सत राम ता के निकट न आओ ॥टेक॥

---

(१) चातक, पपीहा। (२) दुस्तर, कठिन। (३) धीरज धरै।

राम कहत सब जगत भुलाना, सो यह राम न होई।
करम अकरम करुनामय केसो, करता नावँ सु कोई ॥१॥
जा रामहीं सबै जग जानै, भरम भुले रे भाई।
आप आप तें कोइ न जानै, कहै कौन सो जाई ॥२॥
सत तन लोभ परस जीतै मन, गुना प्रश्न नहिं जाई।
अलख नाम जाको ठौर न कतहूँ, क्यों न कहो समुझाई ॥३॥
भन रैदास उदास ताहि ते, करता क्यों है भाई।
केवल करता एक सही सिर, सत्त राम तेहि ठाईं ॥४॥

॥ १० ॥

ऐसो कछु अनुभौ कहत न आवै।
साहिब मिलै तो को बिलगावै ॥टेक॥
सब में हरि है हरि में सब है, हरि अपनो जिन जाना।
साखी नहीं और कोइ दूसर, जाननहार सयाना ॥१॥
बाजीगर सों राचि रहा, बाजी का मरम न जाना।
बाजी झूठ साँच बाजीगर, जाना मन पतियाना ॥२॥
मन थिर होइ तो कोइ न सूझै, जानै जाननहारा।
कह रैदास बिमल बिबेक सुख, सहज सरूप सँभारा ॥३॥

॥ ११ ॥

अखिल खिलै नहिं का कहि पंडित, कोइ न कहै समुझाई।
अबरन बरन रूप नहिं जा के, कहँ लौं लाइ समाई ॥टेक॥
चंद सूर नहिं रात दिवस नहिं, धरनि अकास न भाई।
करम अकरम नहिं सुभ आसुभ नहिं, का कहि देहुँ बड़ाई ॥१॥
सीत वायु ऊसन नहिं सरवत[1], काम कुटिल नहिं होई।
जोग न भोग क्रिया नहिं जा के, कहौं नाम सत सोई ॥२॥
निरंजन निराकार निरलेपी, निरबीकार निसासी।
काम कुटिलता ही कहि गावैं, हरहर[2] आवै हाँसी ॥३॥

(१) पानी के ऐसा हो कर चूना। (२) ठठाय के।

गगन[1] घूर[2] धूप[3] नहिं जा के, पवन पूर नहिं पानी।
गुन निर्गुन कहियत नहिं जाके, कहौ तुम बात सयानी ॥४॥
याही सों तुम जोग कहत हो, जब लग आस की पासी[4]।
छुटै तबहि जब मिलै एकही, भन रैदास उदासी ॥५॥

॥ १२ ॥

नरहरि[5] चंचल है मति मेरी। कैसे भगति करूँ मैं तेरी ॥टेक॥
तूँ मोहिं देखै हौं तोहि देखूँ, प्रीति परस्पर होई ॥१॥
तूँ मोहिं देखै तोहि न देखूँ, यह मति सब बुधि खोई ॥२॥
सब घट अंतर रमसि निरंतर, मैं देखन नहिं जाना।
गुन सब तोर मोर सब औगुन, कृत उपकार न माना ॥३॥
मैं तैं तोरि मोरि असमझि सों, कैसे करि निस्तारा।
कह रैदास कृस्न करुनामय, जै जै जगत अधारा ॥४॥

॥ १३ ॥

राम बिन संसय गाँठि न छूटै।
काम किरोध लोभ मद माया, इन पंचन मिलि लूटै ॥टेक॥
हम बड़ कबि कुलीन हम पंडित, हम जोगी संन्यासी।
ज्ञानी गुनी सूर हम दाता, याहु कहे मति नासी ॥१॥
पढ़े गुने कछु समुझि न परई, जौं लों भाव न दरसै।
लोहा हिरन[6] होइ धौं कैसे, जौं पारस नहिं परसै ॥२॥
कह रैदास और असमुझ सी, चालि परे भ्रम भोरे।
एक अधार नाम नरहरि को, जिवन प्रान धन मोरे ॥३॥

॥ १४ ॥

जब राम नाम कहि गावैगा, तब भेद अभेद समावैगा ॥टेक॥
जे सुख है या रस के परसे, सो सुख का कहि गावैगा ॥१॥

(१) आकाश। (२) पृथ्वी। (३) तेज, अग्नि। (४) फाँसी। (५) नरसिंह जी अर्थात् ईश्वर के एक अवतार का नाम। (६) सोना।

गुरु परसाद भई अनुभो मति, विष अम्रित सम धावैगा ॥२॥
कह रैदास मेटि आपा पर, तब वा ठौरहि पावैगा ॥३॥

॥ १५ ॥

संतो अनिन[1] भगति यह नाहीं।
जब लग सिरजत मन पाँचो गुन, ब्यापत है या माहीं ॥टेक॥
सोई आन अंतर करि हरि सों, अपमारग को आनै।
काम क्रोध मद लोभ मोह की, पल पल पूजा ठानै ॥१॥
सत्य सनेह इष्ट अँग लावै, अस्थल अस्थल खेलै।
जो कछु मिलै आन आखत[2] सों, सुत दारा सिर मेलै ॥२॥
हरिजन हरिहि और ना जानै, तजै आन तन त्यागी।
कहै रैदास सोई जन निर्मल, निसि दिन जो अनुरागी ॥३॥

॥ १६ ॥

भगती ऐसी सुनहु रे भाई। आइ भगति तब गई बड़ाई ॥टेक॥
कहा भयो नाचे अरु गाये, कहा भयो तप कीन्हे।
कहा भयो जे चरन पखारे, जौं लों तत्त्व न चीन्हे ॥१॥
कहा भयो जे मूँड़ मुड़ायो, कहा तीर्थ ब्रत कीन्हे।
स्वामी दास भगत अरु सेवक, परम तत्त्व नहिं चीन्हे ॥२॥
कहै रैदास तेरी भगति दूरि है, भाग बड़े सो पावै।
तजि अभिमान मेटि आपा पर, पिपिलक[3] ह्वै चुनि खावै ॥३॥

॥ १७ ॥

अब कछु मरम बिचारा हो हरि।
आदि अंत औसान राम बिन, कोइ न करै निवारा हो हरि ॥टेक॥
जब मैं पंक पंक[4] अमृत जल, जलहि सुद्ध होइ जैसे।
ऐसे करम भरम जग बाँध्यो, छूटै तुम बिन कैसे हो हरि ॥१॥

(१) अनन्य। (२) अक्षत, कुछ चावल। (३) पिपीलिका—चींटी। (४) कीचड़।

जप तप बिधी निषेध नाम करुँ, पाप पुन्न दोउ माया ।
ऐसे मोहिं तन मन गति बीमुख, जनम जनम डँहकाया[1] हो हरि ॥२॥
ताड़न[2] छेदन[3] त्रायन[4] खेदन[5], बहु बिधि कर ले उपाई ।
लोनखड़ी[6] संजोग बिना जस, कनक कलंक न जाई हो हरि ॥२॥
भन रैदास कठिन कलि के बल, कहां उपाय अब कीजै ।
भव बूड़त भयभीत जगत जन, करि अवलंबन[7] दीजै हो हरि ॥४॥

॥ १८ ॥

नरहरि प्रगटसि ना हो प्रगटसि ना हो ।
दानानाथ दयाल नरहरे ॥टेक॥
जनमेउँ तोही ते बिगरान । अहो कछु बूझै बहुरि सयान ॥१॥
परिवारि बिमुख मोहिं लागि । कछु समुझि परत नहिं जागि[8] ॥२॥
यह भौ बिदेस कलिकाल । अहो मैं आइ पर्यों जमजाल ॥३॥
कबहुक तोर भरोस । जो मैं न कहूँ तो मोर दोस ॥४॥
अस कहिये तेऊ न जान । अहो प्रभु तुम सरबस में सयान ॥५॥
सुत सेवक सदा असोच । ठाकुर पितहिं सब सोच ॥६॥
रैदास बिनवै कर जोरि । अहो स्वामी तुम मोहिं न खोरि[9] ॥७॥
सु[10] तो पुरबला अकरम मोर । बलि जाउँ करौ जिन कोर[11] ॥८॥

॥ १९ ॥

त्यों तुम कारन केसवे, लालच जिव लागा ।
निकट नाथ प्रापत नहीं, मन मोर अभागा ॥टेक॥
सागर सलिल[12] सरोदिका[13], जल थल अधिकाई ।
स्वाँति बुन्द की आस है, पिउ प्यास न जाई ॥१॥
जौं रे सनेही चाहिये, चित्त बहु दूरी ।
पंगुल फल न पहूँच ही, कछु साध न पूरी ॥२॥

---

(१) ठगाया । (२) मारना । (३) काटना । (४) रक्षा करना । (५) शोक करना, त्याग करना । (६) नौसादर । (७) सहारा । (८) संसार या जगने पर । (९) दोष न बिचारो । (१०) सो । (११) कसर । (१२) पानी । (१३) तालाब का पानी ।

कह रैदास अकथ कथा, उपनिषद[1] सुनीजै ।
जस तूँ तस तूँ तस तुहीं, कस उपमा दीजै ॥३॥

॥ २० ॥

गोबिंदे भवजल ब्याधि अपारा ।
ता में सूझै वार न पारा ॥टेक॥
अगम घर दूर उरतर, बोलि भरोस न देहू ।
तेरी भगति अरोहन संत अरोहन[2], मोहिं चढ़ाइ न लेहू ॥१॥
लोह की नाव पखान बोझी, सुकिरित भाव बिहीना ।
लोभ तरंग मोह भयो काला, मीन भयो मन लीना ॥२॥
दीनानाथ सुनहु मम बिनती, कवने हेत बिलंब करीजै ।
रैदास दास संत चरनन, मोहिं अब अवलंबन दीजै ॥३॥

॥ २१ ॥

कहाँ सूते मुग्ध नर काल के मँझ मुख ।
तजिय बस्तु राम चितवत अनेक सुख ॥टेक॥
असहज धीरज लोप कृस्न उधरंत कोप,
मदन भुवंग[3] नहिं मंत्र जंता ।
बिषम पावक ज्वाल ताहि वार न पार,
लोभ की अयनी[4] ज्ञान हंता ॥१॥
बिषम संसार ब्याल[3] ब्याकुल तवै,
मोह गुन बिषै सँग बंधभूता[5] ।
टेरि गुन गारुड़ी[6] मंत्र स्रवना दियो,
जागि रे राम कहि कहि के सूता ॥२॥
सकल सिम्रित[7] जिती सत मति कहै तिती,
हैं इनही परम गति परम बेता[8] ।

(१) वेद का एक अंग जिसमें ब्रह्म का निरूपन है। (२) सीढ़ी। (३) साँप। (४) सेना, फौज। (५) बँधा हुआ। (६) साँप के बिष उतारने का मंत्र। (७) धर्मशास्त्र। (८) जानने वाला।

ब्रह्म ऋषि नारद संभु सनकादिक,
राम राम रमत गये पार तेता ॥३॥
जजन जाजन[1] जाप रटन तीरथ दान,
ओषधी रसिक गदमूल[2] देता।
नागदवनि जरजरी राम सुमिरन बरी,
भनत रैदास चेत निमेता[3] ॥४॥

॥ २२ ॥

रामा हो जग जीवन मोरा।
तूँ न बिसारि राम मैं जन तोरा ॥टेक॥
सकट सोच पोच दिन राती।
करम कठिन मोरि जाति कुजाती ॥१॥
हरहु बिपति भावै करहु सो भाव।
चरन न छाड़ौं जाव सो जाव ॥२॥
कह रैदास कछु देहु अलंबन।
बेगि मिलौ जनि करौ बिलंबन ॥३॥

॥ २३ ॥

तेरा जन काहे को बोलै।
बोलि बोलि अपनी भगति को खोलै ॥टेक॥
बोलत बोलत बढ़ै बियाधी, बोल अबोलै जाई।
बोलै बोल अबोल कोप करै, बोल बोल को खाई ॥१॥
बोलै ज्ञान मान परि बोलै, बोलै बेद बड़ाई।
उर में धरि धरि जब ही बोलै, तब ही मूल गँवाई ॥२॥
बोलि बोलि औरहि समझावै, तब लगि समझ न भाई।
बोलि बोलि समझी जब बूझी, काल सहित सब खाई ॥३॥

(१) यज्ञ करना और कराना। (२) रोग की जड़ को पैदा करता है। (३) नियम करने वाला।

बोलै गुरु अरु बोलै चेला, बोल बोल की परतिति आई ।
कह रैदास मगन भयो जबही, तबहि परमनिधि पाई ॥४॥

॥ २४ ॥

ऐसी भगति न होइ रे भाई ।
राम नाम बिन जो कछु करिये, सो सब भरम कहाई ॥टेक॥
भगति न रस दान भगति न कथै ज्ञान ।
भगति न बन में गुफा खुदाई ॥१॥
भगति न ऐसी हाँसी भगति न आसापासी ।
भगति न यह सब कुल कान गँवाई ॥२॥
भगति न इंद्री बाँधा भगति न जोग साधा ।
भगति न अहार घटाई ये सब करम कहाई ॥३॥
भगति न इंद्री साधे भगति न बैराग बाँधे ।
भगति न ये सब बेद बड़ाई ॥४॥
भगति न मूड़ मुड़ाये भगति न माला दिखाई ।
भगति न चरन धुवाये ये सब गुनी जन कहाई ॥५॥
भगति न तौ लौं जाना आप को आप बखाना ।
जोइ जोइ करै सो सो करम बड़ाई ॥६॥
आपो गयो तब भगति पाई ऐसी भगति भाई ।
राम मिल्यो आपो गुन खोयो रिधि सिधि सबै गँवाई ॥७॥
कह रैदास छूटी आस सब तब हरि ताही के पास ।
आतमा थिर भई तब सबही निधि पाई ॥८॥

॥ २५ ॥

है सब आतम सुख परकास साँचो ।
निरंतर निराहार कलपित ये पाँचो ॥टेक॥
आदि मध्य औसान एक रस, तार बन्यो हो भाई ।
थावर जंगम कीट पतंगा, पूरि रह्यो हरिराई ॥१॥

सर्बेस्वर सर्बाङ्गी सब गति, करता हरता सोई ।
सिव न असिव न साध अस सेवक, उनै भाव नहिं होई ॥२॥
धरम अधरम मोच्छ नहिं बंधन, जरा मरन भव नासा ।
दृष्टि अदृष्टि गेय[1] अरु ज्ञाना, एकमेक रैदासा ॥३॥

(राग गौरी)

॥ २६ ॥

कोई सुमार[2] न देखूँ ये सब उपल[3] चोभा ।
जा को जेता प्रकास ता को तेति ही सोभा ॥टेक॥
हम हिये सीखि सीखै हम हिये माड़े ।
थोरे ही हतराइ चलै पतिसाही[4] छाड़े ॥१॥
अतिही आतुर वह काची ही तोरे ।
बूड़े जल पैसे[5] नहीं पड़ै रे खोरे ॥२॥
थोरे थोरे मुसियत परायो धना ।
कह रैदास सुन संत जना ॥३॥

॥ २७ ॥

मरम कैसे पाइब रे ।
पंडित कौन कह समुझाई, जा ते मेरो आवा गमन बिलाई ॥टेक॥
बहु बिधि धरम निरूपिये, करते देखै सब कोई ।
जेहि धरमे भ्रम छूटिहै, सो धरम न चीन्हे कोई ॥१॥
करम अकरम बिचारिये, सुनि सुनि बेद पुरान ।
संसा सदा हिरदे बसै, हरि बिन कौन हरै अभिमान ॥२॥
बाहर मूँदि कै खोजिये, घट भीतर बिबिध बिकार ।
सुची[6] कौन बिधि होहिंगे, जस कुंजर बिधि ब्यौहार[7] ॥३॥
सतजुग सत त्रेता तप करते, द्वापर पूजा अचार ।
तिहूँ जुगी तीनो दृष्टी, कलि केवल नाम अधार ॥४॥

(१) जानने योग्य । (२) गिनती । (३) पत्थर । (४) बादशाही । (५) पैठे ।
(६) पवित्र । (७) जैसे हाथी नहा कर फिर अपने ऊपर धूल डाल लेता है ।

रबि प्रकास रजनी जथा, यों गत दीसै संसार।
पारस मलि ताँबो छिपा, कनक होत नहिं बार[1] ॥५॥
धन जोबन हरि ना मिलै, दुख दारुन अधिक अपार।
एकै एक बियोगियाँ, ता को जानै सब संसार ॥६॥
अनेक जतन करि टारिये, टारे न टरै भ्रम पास[2]।
प्रेम भगति नहिं ऊपजै, ता ते जन रैदास उदास ॥७॥

(राग जंगली गौड़ी)

॥ २८ ॥

पहिले पहरे रैन दे बनिजरिया[3], तैं जनम लिया संसार बे।
सेवा चूकी राम की, तेरी बालक बुद्धि गँवार बे ॥१॥
बालक बुद्धि न चेता तूँ, भूला माया जाल बे।
कहा होइ पाछे पछिताये, जल पहिले न बाँधी पाल बे ॥२॥
बीस बरस का भया अयाना, थाँभि न सक्का भाव बे।
जन रैदास कहै बनिजरिया, जनम लिया संसार बे ॥३॥
दूजे पहरे रैन दे बनिजरिया, तूँ निरखत चाल्यौ छाँह बे।
हरि न दमोदर ध्याइया बनिजरिया, तैं लेय ना सक्का नाँव बे ॥४॥
नाँव न लीया औगुन कीया, जस जोबन दै तान बे।
अपनी पराई गिनी न काई[4], मंद करम कमान[5] बे ॥५॥
साहिब लेखा लेसी तूँ भरि देसी, भीर परै तुझ ताँह बे।
जन रैदास कहै बनिजरिया, तूँ निरखत चाला छाँह बे ॥६॥
तीजे पहरे रैन दे बनिजरिया, तेरे ढिलड़े पड़े पिय प्रान बे।
काया खनि का करै बनिजरिया, घट भीतर बसे कुजान बे ॥७॥
एक बसै कायागढ़ भीतर, पहला जनम गँवाय बे।
अबकी बेर न सुकिरित कीया, बहुरि न यह गढ़ पाय बे ॥८॥

---

(१) लोहा पारस में लगाने से सोना हो जाता है, ताँबा बार भर भी सोना नहीं होता। (२) फाँसी। (३) बनजारा, व्योपारी। (४) कोई। (५) कमाया।

कंपी देह कायागढ़ खाना, फिरि लागा पछितान बे।
जन रैदास कहै बनिजरिया, तेरे ढिलड़े पड़े परान बे ॥९॥
चौथे पहरे रैन दे बनिजरिया, तेरी कंपन लागी देह बे।
साहिब लेखा माँगिया बनिजरिया, तेरी छाड़ि पुरानी थेह[1] बे ॥१०॥
छाड़ि पुरानी जिद्द अजाना, बालदि[2] हाँकि सबेरियाँ बे।
जम के आये बाँधि चलाये, बारी पूगी[3] तेरियाँ बे ॥११॥
पंथ अकेला बराउ[4] हेला, किस को देह सनेह बे।
जन रैदास कहै बनिजरिया, तेरी कंपन लागी देह बे ॥१२॥

॥ २९ ॥

देवा हमन पाप करंत अनंता,
पतितपावन तेरा बिरद क्यों कहंता ॥टेक॥
तोहिं मोहिं मोहिं तोहिं अंतर ऐसा।
कनक कटक[5] जल तरंग जैसा ॥१॥
मैं केई नर तुहिं अंतरजामी।
ठाकुर थैं जन जानिये जन थैं स्वामी ॥२॥
तुम सबन में सब तुम माहीं।
रैदास दास असमझि सी कहौं कहाँ हीं ॥३॥

॥ ३० ॥

या रामा एक तूँ दाना, तेरी आदि भेख ना।
तूँ सुलतान सुलताना, बंदा सकिसता[6] अजाना ॥टेक॥
मैं बेदियानत न नजर दे, दरमंद[7] बरखुरदार[8]।
बेअदब बदबखत बौरा, बेअकल बदकार ॥१॥
मैं गुनहगार गरीब गाफिल, कमदिला दिलतार[9]।
तूँ कादिर[10] दरियावजिहावन[11], मैं हिरसिया हुसियार ॥२॥

---

(१) सहारा। (२) बरधी। (३) पारी पूरी हो गई। (४) बराओ=चुनलो। (५) कड़ा। (६) टूटा हुआ, निर्बल। (७) दरमाँदा, आजिज। (८) अयाना। (९) सियाह दिल। (१०) समरथ। (११) भवसागर लंघाने या पार कराने वाला।

यह तन हस्त खस्त खराब, खातिर अंदेसाबिसियार[१] ।
रैदास दासहि बोलि[२] साहिब, देहु अब दीदार ॥३॥

॥ ३१ ॥

अब हम खूब वतन घर पाया, ऊँचा खेर[३] सदा मेरे भाया ॥टेक॥
बेगमपूर सहर का नाम । फिकर अँदेस नहीं तेहि ग्राम ॥१॥
नहिं जहाँ साँसत लानत मार । हैफ न खता न तरस जवाल ॥२॥
आब न जान रहम औजूद । जहाँ गनी[४] आप बसै माबूद[५] ॥३॥
जोई सैलि करै सोई भावै । महरम महल में को अटकावै ॥४॥
कह रैदास खलास[६] चमारा । जो उस सहर सो मीत हमारा ॥५॥

(राग आसावरी)

॥ ३२ ॥

केसवे बिकट माया तोर, ताते बिकल गति मति मोर ॥टेक॥
सुबिषंग सन कराल अहिमुख, ग्रसति सुटल सुभेष ।
निरखि माखी बकै ब्याकुल, लोभ कालर देख ॥१॥
इंद्रियादिक दुक्ख दारुन, असंख्यादिक पाप ।
तोहि भजन रघुनाथ अंतर, ताहि त्रास न ताप ॥२॥
प्रतिज्ञा प्रतिपाल प्रतिज्ञा चिन्ह, जुग भगति पूरन काम ।
आस तोर भरोस है, रैदास जै जै राम ॥३॥

॥ ३३ ॥

बरजि हो बरजिवी उतूले[७] माया ।
जग खेया महाप्रबल सबही बस करिये,
सुर नर मुनि भरमाया ॥टेक॥
बालक बृद्ध तरुन अरु सुन्दर, नाना भेष बनावै ।
जोगी जती तपी सन्यासी, पंडित रहन न पावै ॥१॥

---

(१) बहुत । (२) बुलाकर । (३) गाँव । (४) बेपरवाह । (५) जिस की इबादत याने पूजा की जाय । (६) खालिस । (७) अतुल्य ।

बाजीगर के बाजी कारन, सब को कौतिग[1] आवै।
जो देखै सो भूलि रहै, वा का चेला मरम जो पावै ॥२॥
षड ब्रह्मण्ड लोक सब जीते, येहि बिधि तेज जनावै।
सब ही का चित चोर लिया है, वा के पीछे लागे धावै ॥३॥
इन बातन से पचि मरियत है, सब को कहै तुम्हारी।
नेक अटक किन राखो कैसो, मेटो बिपति हमारी ॥४॥
कह रैदास उदास भयो मन, भाजि कहाँ अब जैये।
इत उत तुम गोबिन्द गोसाईं, तुमही माहिं समैये ॥५॥

॥ ३४ ॥

राम मैं पूजा कहा चढ़ाऊँ। फल अरु फूल अनूप न पाऊँ ॥टेक॥
थनहर दूध जो बछरू जुठारी। पुहुप भँवर जल मीन बिगारी ॥१॥
मलयागिर बेधियो भुअंगा। बिष अमृत दोउ एकै संगा ॥२॥
मनही पूजा मनही धूप। मनही सेऊँ सहज सरूप ॥३॥
पूजा अरचा न जानूँ तेरी। कह रैदास कवन गति मेरी ॥४॥

॥ ३५ ॥

तुझ चरनारबिंद भँवर मन।
पान करत मैं पायो रामधन ॥टेक॥
संपति बिपति पटल माया घन।
ता में मगन होइ कैसे तेरो जन ॥१॥
कहा भयो जे गत तन छन छन।
प्रेम जाइ तौ डरै तेरो निज जन ॥२॥
प्रेमरजा[2] लै राखो हृदे धरि।
कह रैदास छूटिबो कवन परि ॥३॥

॥ ३६ ॥

बंदे जानि साहिब गनी[3]।
समझि बेद कतेब बोलै काबे[4] में क्या मनी ॥टेक॥

(१) कौतुक। (२) आज्ञा वा प्रेम का रज अर्थात् धूर। (३) बेपरवाह, धनी। (४) मुसलमानों का तीरथ।

स्याही सपेदी तुरँगी नाना रंग बिसाल बे।
नापैद तैं पैदा किया पैमाल करत न बार बे ॥१॥
ज्वानी जुमी[1] जमाल सूरत देखिये थिर नाहिं बे।
दम छ सै सहस इकइस[2] हर दिन खजानें थैं जाहिं बे ॥२॥
मनी मारे गर्व गाफिल बेमेहर बेपीर बे।
दरी खाना[3] पड़ै चोबा[4] होइ नहीं तकसीर बे ॥३॥
कुछ गाँठि खरची मिहर तोसा, खैर खुबीहा थीर बे।
तजि बद्वा[5] बेनजर कमदिल, करि खसम कान बे।
रैदास की अरदास सुनि, कछु हक हलाल पिछान बे ॥४॥

॥ ३७ ॥

सुकछु बिचार्‌यो तातें मेरो मन थिर ह्वै गयो।
हारे रँग लाग्यो तब बरन पलटि भयो ॥टेक॥
जिन यह पंथी पंथ चलावा। अगम गवन में गम दिखलावा ॥१॥
अबरन बरन कहै जनि कोई। घट घट ब्यापि रह्यो हरि सोई॥
जेइ पद सुन नर प्रेम पियासा। सो पद रमि रह्यो जन रैदासा ॥२॥

॥ ३८ ॥

माधो संगत सरति[6] तुमारी, जगजीवन किस्न मुरारी ॥टेक॥
तुम मखतूल[7] चतुरभुज, मैं बपुरो जस कीरा।
पीवत डाल फूल फल अम्रित, सहज भई मति हीरा ॥१॥
तुम चंदन हम अरँड बापुरो, निकट तुमारी बासा।
नीच बिरिछ ते ऊँच भये हैं, तेरी बास सुबासन बासा ॥२॥
जाति भी ओछी जनम भी ओछा, ओछा करम हमारा।
हम रैदास रामराई को, कह रैदास बिचारा ॥३॥

---

(१) जोश। (२) इक्कीस हजार छ सौ श्वास दिन रात में चलते हैं। (३) दरगाह।
(४) छड़ी की मार। (५) ठग। (६) भाती है। (७) श्रेष्ठ।

॥ 39 ॥

माधो अविद्या हित कीन्ह, ता ते मैं तोर नाम न लीन्ह ॥टेक॥
मृग मीन भृंग पतंग कुंजर, एक दोस बिनास।
पंच ब्याधि असाधि यह तन, कौन ता की आस[1] ॥1॥
जल थल जीव जहाँ तहाँ लौं, करम न था सन जाई।
मोह पासी[2] अबन्ध बंध्यो, करिये कौन उपाई ॥2॥
त्रिगुन जोनि अचेत भ्रम भरमे, पाप पुन्न न सोच।
मानुखा औतार दुरलभ, तहूँ संकट पोच ॥3॥
रैदास उदास मन भौ, जप न तप गुन ज्ञान।
भगत जन भवहरन कहिये, ऐसे परम निधान ॥4॥

॥ 40 ॥

देहु कलाली एक पियाला, ऐसा अबधू है मतवाला ॥टेक॥
हे रे कलाली तैं क्या किया, सिरका सा तैं प्याला दिया ॥1॥
कहै कलाली प्याला देऊँ, पीवनहारे का सिर लेऊँ ॥2॥
चंद सूर दोउ सनमुख होई, पीवै प्याला मरै न कोई ॥3॥
सहज सुन्न में भाठी सरवै, पावै रैदास गुरुमुख दरवै ॥4॥

॥ 41 ॥

भाई रे सहज बन्दो लोई, बिन सहज सिद्धि न होई।
लौलीन मन जो जानिये, तब कीट भृंगी होई ॥टेक॥
आपा पर चीन्हे नहीं रे, और को उपदेस।
कहाँ ते तुम आयो रे भाई, जाहुगे किस देस ॥1॥
कहिये तो कहिये काहि कहिये, कहाँ कौन पतियाइ।
रैदास दास अजान है करि, रह्यो सहज समाइ ॥2॥

(राग सोरठ)

॥ 42 ॥

ऐसी मेरी जाति बिख्यात चमारं।
हृदय राम गोबिंद गुनसारं ॥टेक॥

---

(1) हिरन, मछली, भौंरा, पतंगा, हाथी, इनका एक एक इन्द्री के बेग से नाश होता है तो तन जोकि पाँचों इंद्रियों के वशीभूत है उसका क्या ठिकाना। (2) फाँसी।

सुरसरि जल कृत बारुनी रे[1],
　　जेहि संत जन नहिं करत पानं ।
सुरा अपवित्र तिनि गंगजल आनिये,
　　सुरसरि मिलत नहिं होत आनं[2] ॥१॥
ततकरा[3] अपबित्र कर मानिये,
　　जैसे कागदगर[4] करत बिचारं ।
भगवत भगवंत जब ऊपरे लेखिये,
　　तब पूजिये करि नमस्कारं ॥२॥
अनेक अधम जिव नाम गुन ऊधरे,
　　पतित पावन भये परसि सारं ।
भनत रैदास ररंकार गुन गावते,
　　संत साधू भये सहज पारं ॥३॥

॥ ४३ ॥

पार गया चाहै सब कोई, रहि उर वार पार नहिं होई ॥टेक॥
पार कहै उर वार से पारा । बिन पद परचे भ्रमै गँवारा ॥१॥
पार परम पद मंझ मुरारी । ता में आप रमै बनवारी ॥२॥
पूरन ब्रह्म बसै सब ठाईं । कह रैदास मिले सुख साईं ॥३॥

॥ ४४ ॥

बापुरी सत रैदास कहै रे ।
ज्ञान बिचार चरन चित लावै, हरि की हरनि रहै रे ॥टेक॥
पाती तोड़े पूजि रचावै, तारन तरन कहै रे ।
मूरति माहिं बसै परमेसुर, तौ पानी माहिं तिरै रे ॥१॥
त्रिविध संसार कौन विधि तिरबौ, जे दृढ़ नाव न गहै रे ।
नाव छाड़ि दे डूँगे[5] बसे, तौ दूना दुःख सहै रे ॥२॥

---

(१) गंगाजल से जो शराब बनाई जाय तौ भी उसे साधु लोग नहीं पीयेंगे। (२) अगर वही शराब गंगा में डाल दी जाय तो वह गंगाजल हो जाती है। (३) तत्काल। (४) लेखक। (५) डोंगी।

गुरु को सबद अरु सुरति कुदाली, खोदत कोई रहै रे।
राम कहहु कै न बाढ़ै आपो, सोने कूल बहै रे ॥३॥
झूठी माया जग डहकाया, तो तिन[1] ताप दहै रे।
कह रैदास राम जपि रसना, काहु के सँग न रहै रे ॥४॥

॥ ४५ ॥

यह अँदेस सोच जिय मेरे। निसि बासर गुन गाऊँ तेरे ॥टेक॥
तुम चिंतत मेरी चिंतहु जाई। तुम चिंतामनि हो इक नाईं ॥१॥
भगत हेत का का नहिं कीन्हा। हमरी बेर भये बलहीना ॥२॥
कह रैदास दास अपराधी। जेहि तुम द्रवौ सो भगति न साधी ॥३॥

॥ ४६ ॥

रामराय का कहिये यह ऐसी, जन की जानत हौ जैसी तैसी ॥टेक॥
मीन पकरि काट्यो अरु फाट्यो, बाँटि कियो बहु घानी।
खंड खंड करि भोजन कीन्हो, तहउँ न बिसर्‍यो पानी ॥१॥
तैं हमैं बाँधे मोह फाँसी से, हम तो को प्रेम जेवरिया बाँधे।
अपने छुटन के जतन करत हौं, हम छूटे तोको आराधे ॥२॥
कह रैदास भगति इक बाढ़ी, अब का की डर डरिये।
जा डर को हम तुम को सेवों, सो दुख अजहूँ मरिये ॥३॥

॥ ४७ ॥

रे मन माछला संसार समुदे, तूँ चित्र बिचित्र बिचारि रे।
जेहि गाले गलिये ही मरिये, सो सँग दूरि निवारि रे ॥टेक॥
जम छै डिगन[2] डोरि छै कंकन, पर तिया[3] लागो जानि रे।
होइ रस लुबुध[4] रमै यों मूरख, मन पछितावै अजान रे ॥१॥
पाप गुलीचा[5] धरम निबोली,[6] देखि देखि फल चीख रे।
परतिरिया सँग भलो जौं होवै, तो राजा रावन देख रे ॥२॥

(१) तीन। (२) बंसी लगाने वाला, मछली मारने वाला। (३) पराई स्त्री। (४) लुभाय कर। (५) एक मीठे फल का नाम। (६) नीम का फल जो कड़वा होता है।

कह रैदास रतनफल कारन, गोबिंद का गुन गाइ रे।
काँचे कुंभ भरो जल जैसे, दिन दिन घटतो जाइ रे ॥३॥

॥ ४८ ॥

रे चित चेत अचेत काहे, बालक को देख रे।
जाति ते कोई पद नहिं पहुँचा, रामभगति बिसेख रे ॥टेक॥
खटक्रम सहित जे बिप्र होते, हरिभगति चित दृढ़ नाहिं रे।
हरि की कथा सुहाय नाहीं, सुपच तूलै ताहि रे[1] ॥१॥
मित्र शत्रु अजात सब ते, अंतर लावै हेत रे।
लाग वा की कहाँ जानै, तीन लोक पवेत रे ॥२॥
अजामिल गज गनिका तारी, काटी कुंजर की पास रे।
ऐसे दुरमत मुक्त कीये, तो क्यों न तरै रैदास रे ॥३॥

॥ ४९ ॥

रथ को चतुर चलावन हारो।
खिन हाँकै खिन उभटै[2] राखै, नहीं आन कौ सारो ॥टेक॥
जब रथ थकै सारथी थाकै, तब को रथहि चलावै।
नाद बिंद ये सबही थाके, मन मंगल नहिं गावै ॥१॥
पाँच तत्त को यह रथ साज्यो, अरधे उरध निवासा।
चरन कमल लव लाइ रह्यो है, गुन गावै रैदासा ॥२॥

॥ ५० ॥

जो तुम तोरो राम मैं नहिं तोरौं।
तुम से तोरि कवन से जोरौं ॥टेक॥
तीरथ बरत न करौं अँदेसा। तुम्हरे चरन कमल क भरोसा ॥१॥
जहँ जहँ जाओं तुम्हरी पूजा। तुम सा देव और नहिं दूजा ॥२॥
मैं अपनो मन हरि से जोर्‌यों। हरि से जोरि सबन से तोर्‌यों ॥३॥
सबही पहर तुम्हारी आसा। मन क्रम बचन कहै रैदासा ॥४॥

(१) वह डोम के तुल्य है। (२) दूसरी लीक पर।

॥ ५१ ॥

केहि बिधि अब सुमिरौं रे, अति दुर्लभ दीनदयाल।
मैं महा बिषई अधिक आतुर, कामना की झाल ॥टेक॥
कहा बाहर डिंभ कीये, हरि कनक कसौटीहार।
बाहर भीतर साखि तूँ, म कियो ससौ[1] अँधियार ॥१॥
कहा भयो बहु पाखँड कीये, हरि हृदय सपने न जान।
जो दारा बिभिचारिनी, मुख पतिबरत जिय आन ॥२॥
मैं हृदय हारि बैठ्यों हरी, मो पै सर्यो न एको काज।
भाव भगति रैदास दे, प्रतिपाल करि मोहिं आज ॥३॥

॥ ५२ ॥

माधवे का कहियत भ्रम ऐसा, तुम कहियत होहु न जैसा ॥टेक॥
नरपति एक सेज सुख सूता, सपने भयो भिखारी।
आछत राज बहुत दुख पायो, सो गति भई हमारी ॥१॥
जब हम हुते तबै तुम नाहीं, अब तुम हौ हम नाहीं।
सरिता[2] गवन कियो लहर महोदधि,[3] जल केवल जल माहीं ॥२॥
रजु भुअंग रजनी परगासा[4], अस कछु भरम जनावा।
समुझि परी मोहिं कनक अलंकृत,[5] अब कछु कहत न आवा ॥३॥
करता एक जाय जग भुगता, सब घट सब बिधि सोई।
कह रैदास भगति एक उपजी, सहजै होइ सो होई ॥४॥

॥ ५३ ॥

माधो भरम कैसेहु न बिलाई। ताते द्वैत दरसै आई ॥टेक॥
कनक कुंडल सूत पट जुदा, रजु भुअंग भ्रम जैसा।
जल तरंग पाहन प्रतिमा ज्यों, ब्रह्म जीव द्वति ऐसा ॥१॥
बिमल एक रस उपजै न बिनसै, उदय अस्त दोउ नाहीं।
बिगता बिगत घटै नहिं कबहूँ, बसत बसै सब माहीं ॥२॥

---

(१) चन्द्रमा। (२) नदी। (३) समुद्र। (४) रात को रस्सी देख कर साँप का धोखा हुआ। (५) गहना।

निस्चल निराकार अज अनुपम, निरभय गति गोबिन्दा ।
अगम अगोचर अच्छर अतरक[1], निरगुन अंत अनंदा ॥३॥
सदा अतीत ज्ञान घन बर्जित, निरबिकार अबिनासी ।
कह रैदास सहज सुन्न सत, जिवनमुक्त निधि[2] कासी ॥४॥

॥ ५४ ॥

मन मेरो सत्त सरूप बिचारं ।
आदि अंत अनंत परम पद, संसा सकल निवारं ॥टेक॥
जस हरि कहिये तस हरि नाहीं, है अस जस कछु तैसा ।
जानत जानत जान रह्यो सब, मरम कहो निज कैसा ॥१॥
करत आन अनुभवत आन, रस मिलै न बगर[3] होई ।
बाहर भीतर प्रगट गुप्त, घट घट प्रति और न कोई ॥२॥
आदिहु एक अंत पुनि सोई, मध्य उपाइ जु कैसे ।
अहै एक पै भ्रम से दूजो, कनक अलंकृत जैसे ॥३॥
कह रैदास प्रकास परम पद, का जप तप बिधि पूजा ।
एक अनेक अनेक एक हरि, कहौं कौन बिधि दूजा ॥४॥

॥ ५५ ॥

थोथो जनि पछोरो रे कोई ।
जोइ रे पछोरो जा में निज कन होई ॥टेक॥
थोथी काया थोथी माया । थोथा हरि बिन जनम गँवाया ॥१॥
थोथा पंडित थोथी बानी । थोथी हरि बिन सबै कहानी ॥२॥
थोथा मंदिर भोग बिलासा । थोथी आन देव की आसा ॥३॥
साचा सुमिरन नाम बिसासा[4] । मन बच कर्म कहै रैदासा ॥४॥

(राग भैरो)

॥ ५६ ॥

ऐसा ध्यान धरौं बरो बनवारी,
मन पवन दै सुखमन नारी ॥टेक॥

(१) तर्क से रहित । (२) खजाना । (३) बिगाड़ । (४) बिश्वास ।

सो जप जपौं जो बहुरि न जपना ।
सो तप तपौं जो बहुरि न तपना ॥१॥
सो गुरु करौं जो बहुरि न करना ।
ऐसो मरौं जो बहुरि न मरना ॥२॥
उलटी गंग जमुन में लावौं ।
बिनही जल मंजन ह्वै पावौं ॥३॥
लोचन भरि भरि बिंब निहारौं ।
जोति बिचारि न और बिचारौं ॥४॥
पिंड परे जिव जिस घर जाता ।
सबद अतीत अनाहद राता ॥५॥
जा पर कृपा सोई भल जानै ।
गूँगो साकर[1] कहा बखानै ॥६॥
सुन्न मंडल में मेरा बासा ।
ता ते जिव में रहौं उदासा ॥७॥
कह रैदास निरंजन ध्यावौं ।
जिस घर जावँ सो बहुरि न आवौं ॥८॥

॥ ५७ ॥

अबिगति नाथ निरंजन देवा । मैं क्या जानूँ तुम्हरी सेवा ॥टेक॥
बाँधूँ न बंधन छाऊँ न छाया । तुमहीं सेऊँ निरंजनराया ॥१॥
चरन पताल सीस असमाना । सो ठाकुर कैसे सँपुट[2] समाना ॥२॥
सिव सनकादिक अंत न पाये । ब्रह्मा खोजत जनम गँवाये ॥३॥
तोड़ूँ न पाती पूजूँ न देवा । सहज समाधि करूँ हरि सेवा ॥४॥
नख प्रसाद जाके सुरसरि[3] धारा । रोमावली अठारह भारा[4] ॥५॥
चारो बेद जाके सुमिरत साँसा । भगति हेत गावै रैदासा ॥६॥

(१) शकर, चोनी । (२) डब्बा । (३) कथा है कि भगीरथ की तपस्या से विष्णु के अँगूठे से साठ हजार सगर के लड़कों के तारने के लिये गंगा पृथ्वी पर आईं । (४) अठारह लोक ।

॥ ५८ ॥

भेष लियो पै भेद न जान्यो। अमृत लेइ विषै सो मान्यो ॥टेक॥
काम क्रोध में जनम गँवायो। साधु सँगति मिलि राम न गायो ॥१॥
तिलक दियो पै तपनि न जाई। माला पहिरे घनेरी लाई ॥२॥
कह रैदास मरम जो पाऊँ। देव निरंजन सत कर ध्याऊँ ॥३॥

(राग बिलावल)

॥ ५९ ॥

का तूँ सोवै जाग दिवाना। झूठी जिउन[1] सत्त करि जाना ॥टेक॥
जिन जनम दिया सो रिजक[2] उमड़ावै, घट घट भीतर रहट चलावै।
करि बंदगी छाड़ि मैं मेरा, हृदय करीम सँभारि सबेरा ॥१॥
जो दिन आवै सो दुख में जाई, कीजै कूच रह्यो सच नाहीं।
संगि चली है हम भी चलना, दूर गवन सिर ऊपर मरना ॥२॥
जो कछु बोया लुनिये[3] सोई, ता में फेर फार कस होई।
छाड़िय कूर भजे हरि चरना, ताको मिटै जनम अरु मरना ॥३॥
आगे पंथ खरा है झीना, खाँडे धार जैसा है पैना[4]।
जिस ऊपर मारग है तेरा, पथी पंथ सँवार सबेरा ॥४॥
क्या तैं खरचा क्या तैं खाया, चल दरहाल[5] दिवान बुलाया।
साहिब तो पै लेखा लेसी, भीड़ पड़े तूँ भरि भरि देसी ॥५॥
जनम सिराना किया पसारा, सूझि परयो चहुँ दिसि अँधियारा।
कह रैदास अज्ञान दिवाना, अजहूँ न चेतहु नीफँद[6] खाना[7] ॥६॥

॥ ६० ॥

खालिक सिकस्ता[8] मैं तेरा।
दे दीदार उमेदगार, बेकरार जिव मेरा ॥टेक॥
औवल आखिर इलाह, आदम फरिस्ता बंदा।
जिसकी पनह[9] पीर पैगंबर, मैं गरीब क्या गंदा ॥१॥

---

(१) जीवन। (२) जीविका। (३) काटिये। (४) तेज (५) तुरत। (६) निर्बन्ध। (७) घर। (८) टूटा हुआ, निर्बल। (९) पनाह, रक्षा।

तू हाजरा हजूर जोग इक, अवर नहीं है दूजा ।
जिसके इसक आसरा नाहीं, क्या निवाज क्या पूजा ॥२॥
नालीदोज[1] हनोज[2] बेबखत[3], कमि[4] खिजमतगार तुम्हारा ।
दरमाँदा दर ज्वाब न पावै, कह रैदास बिचारा ॥३॥

॥ ६१ ॥

मैं बेदनि कासनि[5] आखूँ, हरि बिन जिव न रहै कस राखूँ ॥टेक॥
जिव तरसै इक दंग बसेरा, करहु सँभाल न सुर मुनि मेरा ।
बिरह तपै तन अधिक जरावै, नींद न आवै भोज न भावै ॥१॥
सखी सहेली गरब गहेली, पिउ की बात न सुनहु सहेली ।
मैं रे दुहागनि अघ कर जानी, गया सो जोबन साध न मानी ॥२॥
तू साईं औ साहिब मेरा, खिजमतगार बंदा मैं तेरा ।
कह रैदास अँदेसा ये ही, बिन दरसन क्यों जिवहि सनेही ॥३॥

॥ ६२ ॥

हरि बिन नहिं कोइ पतित पावन, आनहिं ध्यावे रे ।
हम अपूज्य पूज्य भये हरि ते, नाम अनूपम गावे रे ॥टेक॥
अष्टादस ब्याकरन बखानैं, तीन काल षट जीता रे ।
प्रेम भगति अंतर गति नाहीं, ता ते धानुक[6] नीका रे ॥१॥
ता ते भलो स्वान को सत्रु[7], हरि चरनन चित लावै रे ।
मुआ मुक्त बैकुंठ बास, जिवत यहाँ जस पावै रे ॥२॥
हम अपराधी नीच घर जनमे, कुटुम्ब लोक करै हाँसी रे ।
कह रैदास राम जपु रसना[8], कटै जनम की फाँसी रे ॥३॥

॥ ६३ ॥

गोबिन्दे तुम्हारे से समाधि लागी,
उर भुअंग भस्म अंग संतत बैरागी[9] ॥४॥

---

(१) जूता सीने वाला यानी चमार । (२) अब तक । (३) अभागी । (४) कमीना । (५) किस से । (६) नाम एक नीच जाति का, धुनिया । (७) डोम । (८) जीभ । (९) शिव जी को "सदा जोगी" कहा है ।

जा के तीन नैन अमृत बैन, सीस जटाधारी ।
कोटि कलप ध्यान अलप, मदन अंतकारी[1] ॥१॥
जाके लील बरन अकल ब्रह्म, गले रुंडमाला ।
प्रेम मगन फिरत नगन, संग सखा बाला ॥२॥
अस महेस बिकट भेस, अजहूँ दरस आसा ।
कैसे राम मिलौं तोहि, गावै रैदासा ॥३॥

॥ ६४ ॥

सो कहा जानै पीर पराई । जाके दिल में दरद न आई ॥टेक॥
दुखी दुहागिनि होइ पियहीना, नेह निरति करि सेव न कीना ।
स्याम प्रेम का पंथ दुहेला, चलन अकेला कोइ संग न हेला ॥१॥
सुख की सार सुहागिनि जानै, तन मन देय अंतर नहिं आनै ।
आन सुनाय और नहिं भाषै, रामरसायन रसना चाखै ॥२॥
खालिक तौ दरमंद[2] जगाया, बहुत उमेद जवाब न पाया ।
कह रैदास कवन गति मेरी, सेवा बन्दगी न जानूँ तेरी ॥३॥

(राग टोड़ी)

॥ ६५ ॥

पावन जस माधो तेरा, तुम दारुन अघमोचन मेरा ॥टेक॥
कीरति तेरी पाप बिनासै, लोक बेद यों गावै ।
जौं हम पाप करत नहिं भूधर, तौ तूँ कहा नसावै ॥१॥
जब लग अंग पंक[3] नहिं परसै, तौ जल कहा पखारै ।
मन मलीन बिषया रस लंपट, तौ हरि नाम सँभारै ॥२॥
जो हम बिमल हृदय चित अंतर, दोष कौन पर धरिहौ ।
कह रैदास प्रभु तुम दयाल हौ, अबँध मुक्ति का करिहौ ॥३॥

---

(१) अंत अर्थात् नाश करनेवाले । (२) दरमाँदा, आजिज । (३) कीचड़ ।

(राग गौड़)

॥ ६६ ॥

आज दिवस[1] लेऊँ बलिहारा।
मेरे घर आया राम का प्यारा ॥टेक॥
आँगन बँगला भवन भयो पावन।
हरिजन बैठे हरिजस गावन ॥१॥
करूँ डंडवत चरन पखारूँ।
तन मन धन उन ऊपरि वारूँ ॥२॥
कथा कहैं अरु अर्थ बिचारैं।
आप तरैं औरन को तारैं ॥३॥
कह रैदास मिलैं निज दास,
जनम जनम कै काटै पास ॥४॥

॥ ६७ ॥

ऐसे जानि जपो रे जीव।
जपि ल्यो राम न भरमो जीव ॥टेक॥
गनिका थी किस करमा जोग।
पर-पूरुष सो रमती भोग ॥१॥
निसि बासर दुस्करम कमाई।
राम कहत बैकुंठे जाई ॥२॥
नामदेव कहिये जाति कै ओछ[2]।
जाको जस गावै लोक ॥३॥
भगति हेत भगता के चले।
अंकमाल ले बीठल मिले[3] ॥४॥
कोटि जग्य जो कोई करै।
राम नाम सम तउ न निस्तरै ॥५॥

---

(१) दिन। (२) नामदेव भक्त ओछी जाति के अर्थात् छीपी थे। (३) बीठल भक्त जाति के माली थे। एक दिन ध्यान में लगे रहने से राजा के पास हार न पहुँचा सके सो भगवान् ने आप उनका रूप धर कर हार पहुँचा दिया।

निरगुन का गुन देखो आई।
देही सहित कबीर सिधाई[1] ॥६॥
मोर कुचिल जाति कुचिल में बास।
भगत चरन हरिचरन निवास ॥७॥
चारिउ बेद किया खंडौति।
जन रैदास करै डंडौति ॥८॥

(राग सारंग)
॥ ६८ ॥

जग में बेद बैद मानींजे।
इनमें और अकथ कछु औरै, कहौ कौन परि कीजै ॥टेक॥
भौजल ब्याधि असाधि प्रबल अति, परम पंथ न गहीजे ॥१॥
पढ़े-गुने कछु समुझि न परई, अनुभव पद न लहीजे ॥२॥
चखबिहीन कर तारि चलतु हैं,[2] तिनहिं न अस भुज दीजै ॥३॥
कह रैदास बिबेक तत्त बिनु, सब मिलि नरक परीजै ॥४॥

(राग कानड़ा)
॥ ६९ ॥

माया मोहिला कान्हा, मैं जन सेवक तेरा ॥टेक॥
संसार प्रपंच में ब्याकुल परमानंदा।
त्राहि त्राहि अनाथ गोबिंदा ॥१॥
रैदास बिनवै कर जोरी।
अबिगत नाथ गवन गति मोरी ॥२॥

॥ ७० ॥

चल मन हरि चटसाल पढ़ाऊँ ॥टेक॥

---

(१) कथा है कि कबीर साहब देह समेत परलोक को सिधारे [देखो कबीर साहब का जीवन-चरित्र उनकी शब्दावली के भाग १ में जो इसी प्रेस में छपी है।] (२) आँख के अंधे हाथ की ताली के इशारे पर चलते हैं यही हाल वेदांतियों का है।

गुरु की साटि ज्ञान का अच्छर।
बिसरै तौ सहज समाधि लगाऊँ ॥१॥
प्रेम की पाटी सुरति की लेखनि।
ररौ ममौ लिखि आँक लखाऊँ ॥२॥
येहि बिधि मुक्त भये सनकादिक।
हृदय बिचार प्रकास दिखाऊँ ॥३॥
कागद कँवल मति मसि करि निर्मल।
बिन रसना निसदिन गुन गाऊँ ॥४॥
कह रैदास राम भजु भाई।
संत साखि दे बहुरि न आऊँ ॥५॥

(राग केदारा)

॥ ७१ ॥

कहु मन राम नाम सँभारि।
माया के भ्रम कहा भूल्यो, जाहुगे कर झारि ॥टेक॥
देखि धौं इहाँ कौन तेरो, सगा सुत नहिं नारि।
तोरि उतँग सब दूरि करिहैं, देहिंगे तन जारि ॥१॥
प्रान गये कहो कौन तेरा, देखि सोच बिचारि।
बहुरि येहि कलि काल नाहीं, जीति भावै हारि ॥२॥
यहु माया सब थोथरी रे, भगति दिस प्रतिहारि।
कह रैदास सत बचन गुरु के, सो जिव ते न बिसारि ॥३॥

॥ ७२ ॥

हरि को टाँडो लादे जाइ रे, मैं बनिजारो राम को।
रामनाम धन पाइयो, ता ते सहज करूँ ब्योहार रे ॥टेक॥
औघट घाट घनो घना रे, निरगुन बैल हमार रे।
रामनाम धन लादियो, ता ते बिषय लाद्यो संसार रे ॥१॥
अंतेही धन धर्‍यो रे, अंतेहि ढूँढ़न जाइ रे।
अनत को धरो न पाइये, ता ते चाल्यो मूल गँवाइ रे ॥२॥

रैन गँवाई सोइ करि, दिवस गँवायो खाइ रे।
हीरा यह तन पाइ करि, कौड़ी बदले जाइ रे ॥३॥
साधुसंगति पूँजी भई रे, बस्तु भई निर्मोल रे।
सहज बरदवा[1] लादि करि, चहुँ दिसि टाँडो मोल रे ॥४॥
जैसा रंग कुसुंभ का रे, तैसा यह संसार रे।
रमइया रंग मजीठ का, ता ते भन रैदास बिचार रे ॥५॥

॥ ७३ ॥

प्रीति सुधारन आव।
तेज सरूपी सकल सिरोमनि, अकल निरंजनराव ॥टेक॥
पिउ सँग प्रेम कबहुँ नहिं पायो, करनी कवन बिसारी।
चक[2] को ध्यान दधिसुत[3] सों हेत है, यों तुम ते मैं न्यारी ॥१॥
भवसागर मोहिं इक टक जोवत, तलफत रजनी जाई।
पिय बिन सेजइ क्यों सुख सोऊँ, बिरह बिथा तन खाई ॥२॥
मेटि दुहाग सुहागिन कीजे, अपने अंग लगाई।
कह रैदास स्वामी क्यों बिछोहे, एक पलक जुग जाई ॥३॥

(राग जैतिश्री)

॥ ७४ ॥

सब कछु करत न कहौं कछु कैसे।
गुन बिधि बहुत रहत ससि जैसे ॥टेक॥
दरपन गगन अनिल[4] अलेप जस।
गंध जलधि प्रतिबिंब देखि तस ॥१॥
सब आरम्भ अकाम अनेहा।
बिधि निषेध कीयो अनेकेहा ॥२॥
यह पद कहत सुनत जेहि आवै।
कह रैदास सुकृति को पावै ॥३॥

---

(१) बैल। (२) चकोर के ऐसा ध्यान। (३) चंद्रमा। (४) हवा।

(राग धनाश्री)

।। ७५ ।।

तेरे देव कमलापति सरन आया ।
मुझ जनम सँदेह भ्रम छेदि माया ।।टेक।।
अति संसार अपार भवसागर,
जा में जनम मरना संदेह भारी ।
काम भ्रम क्रोध भ्रम लोभ भ्रम मोह भ्रम,
अनत भ्रम छेदि मम करसि यारी ।।१।।
पंच संगी मिलि पीड़ियो प्रान यों,
जाय न सक्यो बैराग भागा ।
पुत्रबरग कुल बंधु ते भारजा,
भखै दसौ दिसा सिर काल लागा ।।२।।
भगति चितऊँ तो मोह दुख ब्यापही,
मोह चितऊँ तो मेरी भगति जाई ।
उभय संदेह मोहिं रैन दिन ब्यापही,
दीनदाता करूँ कवन उपाई ।।३।।
चपल चेतो नहीं बहुत दुख देखियो,
काम बस मोहिहो करम फंदा ।
सक्ति संबन्ध कियो ज्ञान पद हरि लियो,
हृदय बिस्वरूप तजि भयो अंधा ।।४।।
परम प्रकास अबिनासी अघ मोचना,
निरखि निज रूप बिसराम पाया ।
बन्दत रैदास बैराग पद चिंतना,
जपौ जगदीस गोबिंद राया ।।५।।

।। ७६ ।।

तेरी प्रीति गोपाल सों जनि घटै हो ।
मैं मोलि महँगे लई तन सटै हो ।।टेक।।

हृदय सुमिरन करूँ नैन अवलोकनो, स्रवनों हरि कथा पूरि राखूँ।
मन मधुकर करौं चित्त चरना धरौं, राम रसायन रसना चाखूँ ॥१॥
साधु संगत बिना भाव नहिं ऊपजै, भाव भगति क्यों होइ तेरी।
बन्दत रैदास रघुनाथ सुनु बीनती, गुरुपरसाद कृपा करौ मेरी ॥२॥

॥ ७७ ॥

कवन भगति ते रहै प्यारो पाहुनो रे।
घर घर देखों मैं अजब अभावनो रे ॥टेक॥
मैला मैला कपड़ा केता एक धोऊँ।
आवै आवै नींदहि कहाँ लों सोऊँ ॥१॥
ज्यों ज्यों जोड़ै त्यों त्यों फाटै।
झूठै सबनि जरै उठि गयो हाटै ॥२॥
कह रैदास परो जब लेख्यो।
जोई जोई कियो रे सोई सोई देख्यो ॥३॥

॥ ७८ ॥

मैं का जानूँ देव मैं का जानूँ।
मन माया के हाथ बिकानूँ ॥टेक॥
चंचल मनुवाँ चहुँ दिसि धावै।
पाँचो इंद्री थिर न रहावै ॥१॥
तुम तो आहि जगतगुरु स्वामी।
हम कहियत कलिजुग के कामी ॥२॥
लोक बेद मेरे सुकृत बड़ाई।
लोक लीक मो पै तजी न जाई ॥३॥
इन मिलि मेरो मन जो बिगारयो।
दिन दिन हरि सों अन्तर पारयो ॥४॥
सनक सनंदन महामुनि ज्ञानी।
सुक नारद ब्यास यह जो बखानी ॥५॥

गावत निगम उमापति स्वामी।
सेस सहस मुख कीरति गामी ॥६॥
जहाँ जाउँ तहाँ दुख की रासी।
जो न पतियाइ साधु हैं साखी ॥७॥
जमदूतन बहु बिधि करि मारयो।
तऊ निलज अजहूँ नहिं हारयो ॥८॥
हरिपद बिमुख आस नहिं छूटै।
ताते तृस्ना दिन दिन लूटै ॥९॥
बहु बिधि करम लिये भटकावै।
तुम्हें दोष हरि कौन लगावै ॥१०॥
केवल रामनाम नहिं लीया।
संतति बिषय स्वाद चित दीया ॥११॥
कह रैदास कहाँ लगि कहिये।
बिन जगनाथ बहुत दुख सहिये ॥१२॥

॥ ७९ ॥

त्राहि त्राहि त्रिभुवनपति पावन।
अतिसय सूल सकल बलि जावन ॥टेक॥
काम क्रोध लंपट मन मोर। कैसे भजन करूँ मैं तोर ॥१॥
बिषय बिहंगम दुन्द नकारी[1]। असरनसरन सरन भौहारी ॥२॥
देव देव दरबार दुआरै। राम राम रैदास पुकारै ॥३॥

॥ ८० ॥

दरसन दीजे राम दरसन दीजै। दरसन दीजे बिलँब न कीजे ॥टेक॥
दरसन तोरा जीवन मोरा। बिन दरसन क्यों जिवै चकोरा ॥१॥
माधो सतगुरु सब जग चेला। अब के बिछुरे मिलन दुहेला ॥२॥
धन जोबन की झूठी आसा। सत सत भाषै जन रैदास ॥३॥

(१) नीचकर्मी।

॥ ८१ ॥

जन को तारि तारि बाप रमइया।
कठिन फंद परयो पंच जमइया ॥टेक॥
तुम बिन सकल देव मुनि ढूढ़ूँ।
कहूँ न पाऊँ जमपास छुड़इया ॥१॥
हम से दीन दयाल न तुम से।
चरन सरन रैदास चमइया[1] ॥२॥

(अथ आरती)

॥ ८२ ॥

आरती कहाँ लों जोवै। सेवक दास अचंभो होवै ॥टेक॥
बावन कंचन दीप धरावै। जड़ बैरागी दृष्टि न आवै ॥१॥
कोटि भानु जा की सोभा रोमै। कहा आरती अगनी होमै ॥२॥
पाँच तत्त्व तिरगुनी माया। जो देखै सो सकल समाया ॥३॥
कह रैदास देखा हम माहीं। सकल जोति रोम सम नाहीं ॥४॥

॥ ८३ ॥

संत उतारैं आरती देव सिरोमनिये।
उर अंतर तहाँ बैसे बिन रसना भनिये ॥टेक॥
मनसा मंदिर माहिं धूप धुपइये।
प्रेम प्रीति की माल राम चढ़इये ॥१॥
चहुँ दिसि दियना बारि जगमग हो रहिये।
जोति जोति सम जोती हिलमिल हो रहिये ॥२॥
तन मन आतम वारि तहाँ हरि गाइये री।
भनत जन रैदास तुम सरना आइये री ॥३॥

॥ ८४ ॥

नाम तुम्हारो आरतभंजन[2] मुरारे।
हरि के नाम बिन झूठे सकल पसारे ॥टेक॥

---

(१) चमार। (२) कष्ट हरता।

नाम तेरो आसन नाम तेरो उरसा[1]।
नाम तेरो केसरि लै छिड़का रे ॥१॥
नाम तेरो अंभिला नाम तेरो चंदन।
घसि जपै नाम ले तुझ कूँचा रे ॥२॥
नाम तेरो दीया नाम तेरो बाती।
नाम तेरो तेलै ले माहिं पसा रे ॥३॥
नाम तेरे की जोति जगाई।
भयो उँजियार भवन सगरा रे ॥४॥
नाम तेरो धागा नाम फूल माला।
भाव अठारह सहस जुहा रे[2] ॥५॥
तेरो कियो तुझे का अरपूँ।
नाम तेरो तुझे चँवर ढुला रे ॥६॥
अष्टादस अठसठ चारि खानि हू।
बरतन है सकल संसा रे ॥७॥
कह रैदास नाम तेरो आरति।
अंतरगति हरि भोग लगा रे ॥८॥

॥ ८५ ॥

जो तुम गोपालहि नहिं गैहो।
तो तुम काँ सुख में दुख उपजै सुखहि कहाँ ते पैहो ॥टेक॥
माला नाय सकल जग डहको झूँठो भेख बनैहो।
झूँठे ते साँचे तब होइहौ हरि की सरन जब ऐहो ॥१॥
कन रस[3] बत रस[4] और सबै रस झूँठहि मूड़ डोलैहो।
जब लगि तेल दिया में बाती देखत ही बुझि जैहो ॥ २ ॥
जो जन राम नाम रँग राते और रंग न सुहैहो।
कह रैदास सुनो रे कृपानिधि प्रान गये पछितैहो ॥ ३ ॥

(१) हुरसा चंदन घिसने का। (२) प्रनाम। (३) कान से सुनने का मजा।
(४) जबान से बोलने का मजा।

॥ ८६ ॥

अब कैसे छुटै नाम रट लागी ॥टेक॥
प्रभुजी तुम चंदन हम पानी । जाकी अँग अँग बास समानी ॥१॥
प्रभुजी तुम घन बन हम मोरा । जैसे चितवत चंद चकोरा ॥२॥
प्रभुजी तुम दीपक हम बाती । जा की जोति बरै दिन राती ॥३॥
प्रभुजी तुम मोती हम धागा । जैसे सोनहिं मिलत सुहागा ॥४॥
प्रभुजी तुम स्वामी हम दासा । ऐसी भक्ति करै रैदासा ॥५॥

॥ ८७ ॥

प्रभुजी संगति सरन तिहारी । जग जीवन राम मुरारी ॥टेक॥
गली गली को जल बहि आयो, सुरसरि जाय समायो ।
संगत के परताप महातम, नाम गंगोदक पायो ॥ १ ॥
स्वाँति बूँद बरसै फनि[1] ऊपर, सीस बिषै[2] होइ जाई ।
ओही बूँद कै मोती निपजै, संगति की अधिकाई ॥ २ ॥
तुम चंदन हम रेंड़ बापुरे, निकट तुम्हारे आसा ।
संगत के परताप महातम, आवै बास सुबासा ॥ ३ ॥
जाति भी ओछी करम भी ओछा, ओछा कसब हमारा ।
नीचै से प्रभु ऊँच कियो है, कह रैदास चमारा ॥ ४ ॥

॥ इति ॥

---

(१) साँप । (२) जहर ।